विवाह विच्छेद का असमाधेय भंग–विवाह सिद्धान्त की आवश्यकता

संजय कुमार शर्मा

पश्चिमी संस्कृति की आयातित दशाओं के बीच विवाह विच्छेद उसी तरह का एक सामान्य व्यवहार बनता जा रहा है जैसा व्यवहार बढ़ते हुए फैशन के अन्तर्गत हमें कुछ नये कार्य करने की प्रेरणा देता है। सह–शिक्षा के प्रभाव से जैसे–जैसे युवा पीढ़ी के युवक और युवतियों के बीच सम्पर्क बढ़ा, परम्परा नैतिकता के मानदण्डों में भी परिवर्तन होने लगा।

देश में एक नयी टी.वी. संस्कृति का प्रचार–प्रसार आरम्भ हुआ, युवा पीढ़ी की मानसिकता ने धर्म और परिवार की मान्यताओं को दरकिनार करते हुए विवाह या जीवनसाथी के चुनाव को अपना व्यक्तिगत अधिकार मानना आरम्भ कर दिया। माता–पिता तथा परिवार की सत्ता का सम्मान करने के बाद भी जब युवा पीढ़ी के विचारों में नाटकीय रूप से परिवर्तन होने लगा तो उनकी यह धारणा बनने लगी कि दाम्पत्य जीवन को तनाव, घुटन या असामंजस्य के बीच बिताने से अधिक अच्छा है कि इसे तोड़कर नये जीवन–साथी का चुनाव कर लिया जाये अथवा भविष्य में वैवाहिक बन्धन से स्वतंत्र रहकर अपनी उपलब्धियों के सहारे जीवन व्यतीत किया जाये। इसी मानसिकता के चलते जहाँ एक ओर विवाह–विच्छेद की दर में वृद्धि होनी आरम्भ हो गयी वहीं दूसरी ओर विवाह–विच्छेद के रूपों पर भी चर्चा प्रारम्भ हुई। सामान्य रूप से माना जाने लगा कि विवाह का अर्थ पति–पत्नी द्वारा साथ–साथ रहकर दाम्पत्य जीवन व्यतीत करना होता है, लेकिन यह तभी सम्भव है जबकि उनके बीच वैवाहिक सम्बन्ध खुशहाल, सुखद एवं मधुर हों। यदि किसी कारणवश या बिना कारण के दोनों का साथ–साथ रहना सम्भव न रह जाय तो वे न्यायालय के माध्यम से पृथक भी हो सकते हैं और विवाह का विघटन भी करा सकते हैं क्योंकि उनके लिये यही हितकर होगा। धार्मिक एवं सामाजिक आधार पर विवाह–विच्छेद को एक समस्या के रूप में देखा जा सकता है लेकिन कानूनी रूप से विवाह–विच्छेद समाज में समताकारी व्यवहारों को प्रोत्साहन देने तथा स्त्रियों को शोषण से बचाने के लिए आवश्यक है। बढ़ती विवाह–विच्छेद की स्थितियों को देखते हुए हिन्दू विवाह के क्षेत्र में विभिन्न कानून पारित किए गए, जो विवाह विच्छेद से सम्बन्धित शर्तों को प्रस्तुत करते हैं।